जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

सूख जाने पर भी खोदी हुई नदी ही प्यासों को मीठा जल देती है, समुद्र नहीं।

– सूक्तिसंग्रह, पृष्ठ–15

वर्ष : 25, अंक: 1 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये

अप्रैल (प्रथम) 2002 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. अनुभवप्रकाश जैन एवं पं. संजीवकुमार गोधा | वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

जैन तीर्थक्षेत्र सम्मेदशिखर के विकास हेतु झारखण्ड सरकार द्वारा अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय

जैनधर्म के प्रमुख तीर्थस्थल पारसनाथ मधुबन के विकास हेतु मुख्य सचिव, झारखण्ड की अध्यक्षता में दिनांक 1 फरवरी 2002 को एक बैठक उनके कार्यालय कक्ष में हुई जिसमें विकास आयुक्त, नगर विकास सचिव, ग्रामीण विकास सचिव, लोक निर्माण (पथ) सचिव एवं ऊर्जा, पर्यटन, लोक स्वास्थ्य अभियंत्रण विभाग के वरिष्ठ पदाधिकारी उपस्थित थे।

दिगम्बर जैनसमाज का प्रतिनिधित्व श्री हनुमानप्रसाद सरावगी रांची ने किया। बैठक में अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये, जिसके महत्त्वपूर्ण अंश निम्नप्रकार हैं –

1. जी.टी. रोड (एन.एच. ह्व 2) स्थित डुमरी में झारखण्ड सरकार द्वारा गिरिडीह जाने के रास्ते पर एक विशाल 35 फुट चौड़ा ग्रेनाइट एवं ट्यूबलर स्ट्रक्चर का द्वार बनाया जायेगा।

2. झुमरी मोड़ से लेकर मधुबन मोड़ का मुख्यपथ झारखण्ड सरकार द्वारा चार लेनों का बनवाया जायेगा, जिसके मध्य में लगभग 5 फुट चौड़ा विभाजक होगा, जिसमें फूलहार वृक्षों के साथ-साथ 70-80 मीटर की दूरी पर वेपर लेम्प लगाये जायेंगे।

3. मधुबन मोड़ पर झारखण्ड सरकार द्वारा उपर्युक्त क्रम संख्या 1 के अनुसार ही एक विशाल द्वार बनाया जायेगा।

4. मधुबन मोड़ से पारसनाथ पहाड़ी की तलहटी तक 4 कि.मी. की सड़क 4 लेनों की बनाई जायेगी, जिसके बीच में विभाजक होगा और जगह-जगह पर वेपर लेम्प लगाये जायेंगे।

5. जैनसमाज आवश्यक समझे तो मधुबन मोड़ से पारसनाथ पहाड़ी की तलहटी तक बैंच अथवा विश्रामस्थल बनवा सकते हैं। जिसके लिये वनविभाग अनुमति देते हुये स्थान उपलब्ध करायेगा।

6. मधुबन में एक बस स्टेण्ड का निर्माण कराया जायेगा, जिससे कि यात्री बसें व अन्य बाहर से आनेवाले वाहन निर्धारित स्थल पर पार्क किये जा सकें।

7. मधुबन पुलिस ओ.पी. को प्रोन्नत करते हुये अतिरिक्त सशक्त पुलिस दल स्थापित किया जायेगा, जिससे कि सुरक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ किया जा सके। यह सशस्त्र दल नियमितरूप से गश्त भी लगाता रहेगा।

8. मधुबन में जलापूर्ति के लिये 79 लाख की योजना को स्वीकृति दी गई, जिसके तहत प्रेशर फिल्टर द्वारा शुद्ध जलापूर्ति मधुबन बस्ती में की जायेगी।

9. बैठक में उपस्थित गिरिडीह के उपायुक्त ने सूचना दी कि मधुबन में सड़क अतिक्रमण की फिल्म तैयार कर ली गई है और चिन्हित अतिक्रमण को हटाने का कार्य जल्दी ही प्रारंभ किया जायेगा।

10. अतिक्रमण हटाये जाने से विस्थापित दुकानदारों को किसी अन्य जगह पर स्थान देने की व्यवस्था पर गिरिडीह के उपायुक्त विचार करेंगे।

11. पारसनाथ पहाड़ की तलहटी से डाक बंगला (वायरलैस स्टेशन) तक झारखण्ड सरकार द्वारा पक्की सड़क बनाने की स्वीकृति दी गई और अब यह सड़क अलकतरा (बीटूमेन) की बन जायेगी, जिससे जो यात्री छोटी गाड़ियों द्वारा भगवान पारसनाथ की टोंक तक जाना चाहेंगे, उन्हें सुविधा होगी।

12. डाक बंगला (वायरलेस स्टेशन) से लेकर भगवान पारसनाथ की टोंक तक दिगम्बर एवं श्वेताम्बर समाज सीढ़ियां बनाने की व्यवस्था करेगा।

13. जैन तीर्थयात्री जिस पथ से पैदल अथवा डोली से यात्रा करते हैं, उसकी डाक बंगला तक मरम्मत तथा विद्युत व्यवस्था झारखण्ड सरकार द्वारा की जायेगी।

14. मधुबन क्षेत्र में तत्काल प्रभाव से मांस-मदिरा की बिक्री पर प्रतिबंध लगाया जायेगा अर्थात् मधुबन मोड़ से लेकर सम्मेदशिखर के चारों ओर का क्षेत्र प्रतिबंधित क्षेत्र घोषित किया जायेगा।

15. मधुबन में झारखण्ड सरकार द्वारा एक चिकित्सा केन्द्र की स्थापना की जायेगी।

इस बैठक में यह भी निर्णय लिया गया कि उपर्युक्त बिन्दुओं पर किये गये कार्यों की प्रगति की समीक्षा समय-समय पर की जाती रहेगी।

अमेरिका में द्वितीय जैन पाठशाला अध्यापक सम्मेलन

अमेरिका के लासएंजिल्स नगर में जैना एजुकेशन कमेटी द्वारा 25 से 27 मई 2002 तक द्वितीय जैन पाठशाला अध्यापक सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

इस सम्मेलन में जैन पाठशालाओं के अध्यापक, जैन लेखक, जैन अध्येता एवं पर्सनल जैन वैबसाइट, भाषा एवं कला के अध्यापक आमंत्रित किये गये हैं। **– प्रवीण के. शाह**

चेयर पर्सन, जैना एजुकेशन कमेटी

सम्पादकीय –

हरिवंशपुराण : एक अनुशीलन 3

– रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ....)

वस्तुस्वरूप का निरूपण करने के लिए दो प्रकार की देशना दी है। प्रथम विभागरूप से और द्वितीय विस्ताररूप से। यहाँ प्रस्तुत ग्रन्थ में विभागरूपीय देशना का निरूपण किया गया है। सर्वप्रथम इसमें भगवान महावीर के धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति का वर्णन है; फिर गणधरों की संख्या और भगवान महावीर के राजगृह में आगमन का निरूपण है। तदनन्तर राजाश्रेणिक का गौतम–स्वामी से प्रश्न करना, फिर क्षेत्र, काल का वर्णन, तत्पश्चात् कुलकरों की उत्पत्ति और तीर्थंकर ऋषभदेव की उत्पत्ति, दसवें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ के समय का वर्णन है; फिर क्षत्रिय आदि वर्णों का कथन, हरिवंश की उत्पत्ति और उसी हरिवंश में आगे 20वें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रत के जन्म लेने का निरूपण। तदनन्तर दक्ष प्रजापति का उल्लेख, राजा वसु का वृत्तान्त, विष्णुकुमार मुनि का चरित, सेठ चारुदत्त का चरित, बलदेव की उत्पत्ति, यथास्थान कंस, जरासंध, सिंहरथ, राजा उग्रसेन, वसुदेव आदि की प्रासंगिक चर्चा तथा भगवान नेमीनाथ के भवतापहारी चरित्र का विस्तृत वर्णन है। तदनन्तर अनेक सर्गों में कृष्ण की उत्पत्ति, गोकुल में कृष्ण की बाल चेष्टायें, बलदेव के उपदेश से समस्त शास्त्रों का ग्रहण आदि के कथन के साथ श्रीकृष्ण के जीवन के बारे में एवं कृष्ण से संबंधित संपूर्ण परिवार का प्रासंगिक विस्तृत वर्णन है।

भगवान नेमीनाथ के कथानक में उनकी दिव्यध्वनि के माध्यम से 63 शलाका पुरुषों की उत्पत्ति, तीर्थंकरों के कालसंबन्धी अन्तर का विस्तार, द्वीपायन मुनि के क्रोध की घटना, पाण्डवों के तप आदि की चर्चा आदि जो–जो भी महत्त्वपूर्ण प्रेरणादायक वैराग्यवर्द्धक प्रसंग समय–समय पर घटित हुए, लेखक ने उन सभी को प्रस्तुत पुराण में यथास्थान सविस्तार लिखा है। प्रथम सर्ग के 128 श्लोकों में उन सभी का 'संग्रह विभाग' नाम से संक्षिप्त सूचि के रूप में उल्लेख कर दिया है।

ग्रन्थकार के जमाने में आज जैसी विकसित तकनीक नहीं थी। आज हम अध्याय या सर्गों की विषयवस्तु को ग्रन्थ के प्रारम्भ में सूची के रूप में पृथक से प्रकाशित करते हैं, उसी सूची को आचार्य जिनसेन ने प्रथम सर्ग में श्लाकों के माध्यम से लिखा है। आज की सूचिपत्र बनाने की शैली एक तरह से उसी का विकसितरूप है।

द्वितीय एवं तृतीय सर्ग में – भगवान महावीर के गर्भ–जन्म कल्याणकों का वर्णन, भगवान महावीरस्वामी ने अपने जीवन के 72 वर्षों में कब, क्या किया ? 30 वर्ष की अवस्था में जिनदीक्षा लेकर 12 वर्ष तक आत्मसाधना का अपूर्व पुरुषार्थ कर केवलज्ञान प्राप्त किया। तदनन्तर 66 दिन तक मौन से विहार करते हुए वे राजगृह नगर पहुँचे, वहाँ विपुलाचल पर्वत पर आरूढ़ हुए।

विपुलाचल पर समवसरण में अन्तिम 30 वर्ष तक भगवान महावीर की दिव्य देशना हुई। प्रथम देशना श्रावणकृष्ण प्रतिपदा (एकम) के दिन हुई। जो द्वादशांग के रूप में हुई थी, उसी का संक्षिप्त सार आज हमें चार अनुयोगों की शैली में गणधरों द्वारा प्रतिपादित एवं आचार्यों द्वारा लिखित शास्त्रों के रूप में उपलब्ध है। भगवान महावीरस्वामी ने अपनी दिव्यध्वनि द्वारा जो तत्त्वज्ञान दिया, वह वही तत्त्वज्ञान था जो हमें उनके पूर्व 23 तीर्थंकर दे चुके थे। इन 24 तीर्थंकरों ने भी कुछ नया नहीं कहा, जो अनादि–निधन विश्व में पूर्व परम्परा से वस्तुस्वरूप चला आ रहा है। वही सब तीर्थंकरों की वाणी में आता है, जो जीव उनकी दिव्यध्वनि के सार को समझकर तदनुसार श्रद्धान–ज्ञान और आचरण करते हैं, वे अल्प काल में ही सांसारिक दुःखों से सदा के लिए मुक्त हो जाते हैं।

इन्हीं दोनों सर्गों में समवसरण की रचना का विस्तृत वर्णन है, जिसका प्रस्तुत अनुशीलन में संक्षेप में यथास्थान वर्णन होगा ही।

प्रसंगानुसार गौतम गणधर द्वारा द्वादशांग की रचना का उल्लेख एवं राजा श्रेणिक का सम्यग्दर्शन की प्राप्ति का उल्लेख है। अहिंसा महाव्रतादि श्रमण धर्म का वर्णन सुनकर कितने ही जीवों ने महाव्रत एवं देशव्रत धारण किये।

भगवान महावीरस्वामी का अनेक देशों में विहार, चौंतीस अतिशय, अष्ट प्रातिहार्य, गणधर एवं अन्य शिष्य समूह की चर्चा, तीर्थंकर महावीर का राजगृह पर पहुँचना, वहाँ की प्राकृतिक सुषमा का वर्णन और विपुलाचल पर समवसरण का रचा जाना। चतुर्विध संघ के समक्ष दिव्यध्वनि द्वारा जीवादितत्व, गुणस्थान, चतुर्गति के दुःख और उनमें उत्पत्ति होने के कारण आदि का वर्णन तथा भगवान की देशना सुनकर जीवों का व्रतादिक धारण करना। तत्पश्चात् इस अध्याय के अन्तिम चरण में राजा श्रेणिक ने गणधरदेव से पूछा कि ह्न हे भगवन् ! यह हरिवंश कौन है? कब और कहाँ उत्पन्न हुआ? तथा इसका मूलकारण कौन पुरुष है? प्रजा की रक्षा करने में समर्थ तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ह्न ऐसे ये चारों पुरुषार्थोंवाले हरिवंश में कितने राजा हो चुके हैं ? यह बताने की कृपा करें, साथ ही तीर्थंकरों चक्रवर्तियों, बलभद्रों, नारायणों तथा प्रतिनारायणों के चरित्र, उनके वंशों की उत्पत्ति और लोकालोकविभाग की व्यवस्था क्या है ? यह भी बतायें। इसप्रकार धर्मतीर्थप्रवर्तन नामक द्वितीय सर्ग एवं श्रेणिक प्रश्नवर्णन नामक तृतीय सर्ग है।

इसतरह हम देखते हैं कि 'हरिवंश पुराण' को निमित्त बनाकर जिनागम के मूलभूत–प्रयोजनभूत चारों अनुयोगों की चर्चा की जा रही है। इन सब सिद्धान्तों को इसी ग्रन्थ को आधार बनाकर आगे ग्रन्थ के अनुशीलन में प्रस्तुत करने का प्रयत्न रहेगा, ताकि संक्षिप्त रुचिवाले पाठक लाभान्वित हो सकें। **(क्रमशः)**

वैराग्य समाचार

1. खण्डवा निवासी श्री कुंवरचन्दजी बालचन्दजी का दिनांक 28 फरवरी 2002 को देहावसान हो गया है। आप सरल परिणामी एवं धार्मिक वृत्ति के थे। आपके परिवार द्वारा 101 रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

2. सौ. इन्दुमती जसवंतलाल कामदार का 21 फरवरी को मुम्बई में देहावसान हो गया है। आप गुरुदेवश्री के तत्त्वज्ञान से जीवनभर जुड़ी रहीं।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों – यही मंगल कामना है।

कहान सन्देश

मोक्षमार्ग का प्रथम सोपान

(सम्यग्दर्शन पुस्तक के आधार से)

(97 वीं किस्त)

(गतांक से आगे ....)

श्री पद्मनन्दी महान् दिगम्बर संत थे। वे जंगल में आत्मा की रमणता करते थे। जंगल में उन्होंने यह शास्त्र रचा है। इसमें वे कहते हैं कि अहो ! जो जीव देह से और विकार से भिन्न चैतन्यस्वरूप आत्मा को जानकर उसके ध्यान में स्थिर होते हैं, उनकी बात तो दूर रहो, उनकी तो क्या बात करें ! परन्तु जिसे शुद्ध आत्मा की चिन्तामात्र वर्तती है अर्थात् दूसरी सभी चिन्तायें छोड़कर मात्र आत्मा के चिन्तन में जो सदा रत रहता है, उसका जीवन भी धन्य है। लक्ष्मी इत्यादि परिग्रह की पकड़ तो ममता और संसार का कारण है; अत: उसका जीवन धन्य नहीं कहलाता है; परन्तु चैतन्यतत्त्व की चिन्ता की जिसने पकड़ की है, उसके जीवन को संत, महात्मा धन्य कहते हैं। यहाँ चिन्ता कहने पर राग नहीं समझना; पर ज्ञान में चैतन्य की महिमा का घोलन समझना।

संसार में रखड़ते-रखड़ते अनंतबार मनुष्यदेह पाकर आत्मा के भान बिना मरा; परन्तु आत्मा क्या है ह्न यह बात जानी नहीं; अत: उसकी महिमा बताते हुये कहते हैं कि बाहर की चिन्ता टालकर जो आत्मस्वरूप में ठहर गये हैं, उन्होंने तो करने योग्य कार्य कर ही लिया है। उनकी तो क्या बात कहें ! परन्तु जिसने जगत की चिन्ता को छोड़कर आत्मा की चिन्ता की पकड़ भी हो गई है कि अहो ! मैंने अपने आत्मा को अनन्तकाल में पहिचाना नहीं, अनन्तकाल में कभी आत्मा का ध्यान किया नहीं, आत्मा को भूलकर बाह्यपदार्थों की चिन्ता में ही रखड़ा हूँ। अब तो सत्समागम में आत्मा को जानकर उसका ही ध्यान करना योग्य है ह्न इसप्रकार आत्मा की चिन्ता करता है, आत्मा की पकड़ करता है, उसका जीवन भी प्रशंसनीय है।

श्रीमद् राजचन्द्रजी इस पद्मनन्दी-पचीसी शास्त्र को **वनशास्त्र** कहते हैं। यह शास्त्र वन में रचा गया है और वन में रहकर ज्ञान-ध्यान करने के लिये यह शास्त्र है; अत: इसे वनशास्त्र कहा है। आत्मा का भान करके उसके ध्यान में जो ठहर गया है, उसको तो सब वन ही है, उसका आत्मा ही उसका वन है।

अहा ! मेरा स्वभाव जगत का साक्षी ज्ञाता है, क्षणिक विकार अथवा देह मेरा स्वरूप नहीं है ह्न इसप्रकार जिसके अन्तर में चैतन्य की चिन्ता जागी है, उसकी आचार्यदेव चिन्ता करते हैं। अहो ! जो चैतन्यलक्षी जीवन जीता है, वही प्रशंसनीय है, बाकी सभी चैतन्य के लक्ष के बिना जीवन जीते हैं, वे तो मुर्दा समान हैं। यह शरीर तो संयोगी-अनित्य है, वे तो अनंत आये और गये; पर मेरा आत्मा अनादि-अनंत एकरूप है, उसका कभी नाश नहीं होता है। इसप्रकार जिसे दिन और रात आत्मा की चिन्ता जागी है, आत्मा क्या है, उसका भान करने के लिये, उसका ध्यान करने के लिये उसकी भावना करने के लिये जिसको सदा ही अन्तर में आत्मा की रटन चालू हो गई है। उसका जीवन प्रशंसनीय है। जगत के जंजाल की चिन्ता के कारण जिसे आत्मा के विचार का भी अवकाश नहीं है, उसका तो जीवन व्यर्थ ही चला जाता है। जगत के जंजाल की चिन्ता का लगाव छूटकर जिसे आत्मा की चिन्ता जागी है, उसका जीवन धन्य है।

अमेरिका में ऐसी मशीन है कि जिसमें पैसा डालने पर फोटो बाहर आती है। लोगों को ऐसी मशीन का तो विश्वास है; परन्तु आनंदकंद आत्मा में जितनी पुरुषार्थ की एकाग्रता डालेंगे, उतनी ही निर्मलपर्याय प्रकट होगी अर्थात् जितनी पुरुषार्थ की एकाग्रता करेंगे उतनी ही फोटो पर्याय में आयेगी ह्न ऐसी चैतन्यशक्ति का विश्वास जगत को नहीं होता है। चैतन्यशक्ति को पहिचानकर उसके खाते में जितनी पुरुषार्थ की एकाग्रतारूप कीमत डालते हैं, उतनी निर्मलदशा अन्तर की शक्ति में से प्रकट हुये बिना नहीं रहती है।

तथा एक अणुबम गिरे तो सम्पूर्ण नगर का नाश कर देता है, इसप्रकार अणुबम की शक्ति का विश्वास और महिमा करता है; परन्तु आत्मा के श्रद्धारूपी अणुबम में ऐसी ताकत है कि अनंत कर्मों को एकक्षण में भस्म कर डालता है, उसका विश्वास और महिमा आनी चाहिये। पहले अन्तर में आत्मा की जिज्ञासा और मंथन जागना चाहिये। जिसे अन्तर के चैतन्यतत्त्व को शोधने के लिये, उसका अनुभव करने के लिये, उसका साक्षात्कार करने के लिये और उसके ध्यान में स्थिर हो जाने के लिये रात और दिन, स्वप्न में अथवा जागते हुये, हिलते और चलते हुये सदा ही रटन चलती है, उसका जीवन धन्य है।

जिसप्रकार माता से बिछुड़ गये बालक को 'मेरी माँ- मेरी माँ' - इसप्रकार अपनी माता की ही रटन लगी रहती है। कोई उससे पूछे कि तुम्हारा नाम क्या है तो कहेगा कि मेरी माँ ! कोई उससे खाने को पूछे तो कहेगा कि मेरी माँ ! इसप्रकार माता की ही बात करता है; उसीप्रकार जिस भव्य जीव को आत्मा की दरकार लगती है, आत्मा की रटन और चिन्ता जो प्रकट करता है, आत्मा के अलावा दूसरों की रुचि अन्तर में नहीं होने देता है, उसका जीवन धन्य है। अहो ! पूर्ण चिदानन्दस्वरूप मेरा आत्मा है, उसका भान और प्राप्ति जबतक नहीं होती है, तबतक यथार्थ शान्ति और सुख नहीं होता है। अभी तक का अनंतकाल इसके भान बिना भ्रान्ति में गवाँ दिया। अब एक क्षण भी गवाँना नहीं है - इसप्रकार आत्मा की चिन्तावाला जीव अन्य किसी की रुचि नहीं करता है।

जो इस चैतन्यस्वभाव के भान को प्रकट करके उसे ध्यान में ध्याते हैं। उनकी महिमा की क्या बात करना ? उन्होंने तो कार्य प्रकट कर लिया है; अत: वे कृतकृत्य ही हैं; परन्तु जिसने उसके कारणरूप रुचि प्रकट की है अर्थात् कि मेरा यह कार्य कैसे प्रकट होगा ? आनंदकंद आत्मा का अनुभव अन्दर से कैसे प्रकट होगा ? - ऐसी जिसे चिन्ता प्रकटी है, उस आत्मा का जीवन भी संत आचार्य कहते हैं कि धन्य है, संसार में उसका जीवन प्रशंसनीय है। जगत में पैसा-स्त्री-शरीरादि की चिन्ता करनेवाले का जीवन प्रशंसनीय नहीं है; परन्तु जिसने अन्य परिग्रह की चिन्ता छोड़कर चैतन्य की चिन्ता का ही परिग्रह किया है, उसका जीवन शान्ति और समाधि प्राप्त करने का कारणरूप है। मनोहर है, रमणीय है, प्रशंसा योग्य है। देह छूटने के काल में उसे अन्तर में आत्मा की शान्ति और समाधि प्राप्त होगी; अत: उसका जीवन धन्य है। बड़े-बड़े देव भी आकर ऐसे भव्य जीव की सेवा और आदर करते हैं।

देखो ! यह दुर्लभ मनुष्यभव पाकर करोड़ों रुपया प्राप्त करने में, मान-इज्जत इत्यादि प्राप्त करने में जीवन बितानेवाले का जीवन यहाँ धन्य नहीं कहा है; परन्तु अन्तर में जो चैतन्य की भावना करता है, उसका जीवन धन्य है।

(क्रमश:)

तत्वचर्चा **समयसार का सार** **44**

गतांक से आगे

— डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

इसे और अधिक स्पष्टता से समझने के लिए समयसार के 109 कलश का यह पद्यानुवाद उपयुक्त रहेगा —

(हरिगीत)

'त्याज्य ही हैं जब मुमुक्षु के लिए सब कर्म ये।
तब पुण्य एवं पाप की यह बात करनी किसलिए।।

निज आतमा के लक्ष्य से जब परिणमन हो जायेगा।
निष्कर्म में ही रस जगे तब ज्ञान दौड़ा आयेगा।।'

इसी सन्दर्भ में संस्कृत में ऐसा लिखा है कि —

'का किल कथा पुण्यस्य पापस्य वा' पुण्य और पाप की क्या कथा करें ? जहाँ कर्म ही छोड़ना है, वहाँ पुण्य और पाप की क्या बात करना ? जब इस जीव को यह दृढ़ प्रतीति हो जाय कि मुझे कुछ करना ही नहीं है; तभी इस जीव को निष्कर्म में रस आ सकता है। जब इस जीव को धर्म का सम्यक् स्वरूप समझ में आए, तभी निष्कर्म में रस जग सकता है।

जबतक इस जीव को पर के कर्तृत्त्व में रस है, तबतक इसे निष्कर्म में रस जग ही नहीं सकता।

आत्मानुभव के लिए कुछ करना नहीं है। जब इस जीव को निष्कर्म में रस जगेगा, तब स्वयमेव ही ज्ञान दौड़ा आएगा। पुण्य–पाप तो जड़ की क्रिया है, इसे करते–करते अनंतकाल व्यतीत हो गया है। अनंतकाल से शुभभाव करते हुए कभी इस जीव को सुख–शान्ति प्राप्त नहीं हुई।

यदि इस जीव ने पुण्य नहीं किया होता तो इसे यह मनुष्य देह कैसे मिलती ? यह जीव यदि ऐसे ही कर्म करता रहेगा तो जैसे मनुष्यदेह प्राप्त हुई, वैसे ही एक दिन निगोदावस्था में भी चला जाएगा।

अतः हे जीव ! कर्तृत्त्व का अभिमान मस्तिष्क से उतार फेंक। यह पुण्यपापाधिकार निष्कर्म होने का अधिकार है।

इसप्रकार इस पुण्यपापाधिकार में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने पुण्यकर्म एवं पापकर्म — दोनों से निष्कर्म होने का उपदेश दिया है, आदेश दिया है।

ग्यारहवाँ प्रवचन

जिसके आश्रय से धर्म प्रगट होता है — ऐसा त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा; वर्णादि एवं रागादि भावों से भिन्न है। न तो वह वर्णादि, रागादि भावोंरूप है और न ही वह उनका स्वामी है। यही जीवाजीवाधिकार का सारांश है।

कर्त्ताकर्माधिकार में यह बताया है कि वर्णादि एवं रागादि जितने भी परपदार्थ हैं, इन सबका यह भगवान आत्मा न कर्त्ता है न ही भोक्ता है।

वर्णादि और रागादि भावों के लक्ष्य से आत्मा में जो पुण्य और पाप भाव होते हैं, वे दोनों यद्यपि एकप्रकार के ही हैं; लेकिन उनमें यह जीव इष्ट–अनिष्ट की कल्पना करता है; यह पुण्य को ही धर्म मानकर बैठा है; इसप्रकार पुण्यपापाधिकार में आत्मा को पुण्य–पाप से पराङ्गमुख किया गया है।

अब, इस क्रमप्राप्त आस्रवाधिकार में आचार्य कहते हैं कि जिन पुण्य–पाप की चर्चा पुण्यपापाधिकार में की थी; वे पुण्य–पापभाव ही आस्रव हैं। पुण्य–पाप परिणाम ही भावास्रव हैं; इन परिणामों के निमित्त से ही कर्मों का बंध होता है। अशुभकर्मों के आने के द्वार को पापास्रव एवं उनके बंध को पापबंध तथा शुभ कर्मों के आने के द्वार को पुण्यास्रव एवं उनके बंध को पुण्यबंध कहते हैं।

इसप्रकार पुण्य–पाप दोनों ही आस्रवतत्त्व में सम्मिलित होते हैं। रागादि और वर्णादि 29 प्रकार के भाव पुण्य–पाप में ही आते है, आत्मा में नहीं, ये आत्मा से सर्वथा भिन्न हैं।

इस जीव को आस्रवभावों से एकत्व, ममत्व, कर्तृत्त्व, भोक्तृत्त्व बुद्धि का त्याग करना है। यदि ये आस्रवभाव इस जीव के जानने में आ जायें तो सहज ज्ञाता–द्रष्टा भाव से जान लेना है; क्योंकि स्व–पर दोनों को जानना आत्मा का स्वभाव है और समस्त ज्ञेयों में प्रमेयत्व नामक गुण है; उसके कारण वे ज्ञेय भी ज्ञान का विषय बनते हैं। यह उनका स्वभाव है।

इस संदर्भ में गुरुदेव के विचार चिन्तनीय हैं, वे कहते हैं कि ज्ञान जो ज्ञेयों को जानता है, वह ज्ञेयों के कारण नहीं जानता है। उनमें प्रमेयत्व नामक धर्म है; इसलिए भी उन्हें ज्ञान नहीं जानता। परज्ञेयों को जाने — ऐसी बाध्यता इस आत्मा को नहीं है। ज्ञेयों का ज्ञान ज्ञेयों के कारण होता है — यह तो बौद्धमत है। जिस समय जिस ज्ञेय को जानना है, उस समय उस ज्ञेय को जानना — यह योग्यता स्वयं ज्ञान की है, यह ज्ञान का स्वभाव है। तात्पर्य यह है इस जीव के ज्ञान में वह ज्ञेय आया, इसमें वह ज्ञेय कारण नहीं है; अपितु इस ज्ञान की पर्यायगत योग्यता ही कारण है। इस पर्यायगत योग्यता के कारण ही वह जानने में आता है, इसप्रकार इस आत्मा का पर के साथ ऐसा कोई संबंध नहीं है कि जिसके कारण इस आत्मा को किसी भी प्रकार की पराधीनता प्राप्त हो। जैसा कि आचार्य देव ने पूर्व में प्रतिज्ञा की थी कि —

'नास्ति सर्वोऽपि सम्बन्धो, पर द्रव्यात्मतत्त्वयोः।'

परद्रव्य और आत्मा में कोई भी सम्बन्ध नहीं है। ज्ञाता–ज्ञेय सम्बन्ध कोई सम्बन्ध नहीं है, वह तो स्वभाव है।

यह सम्बन्ध नाम तब पाता जब हम ज्ञेय के कारण जानते। हम यदि ज्ञेय से प्रभावित होते तब यह सम्बन्ध नाम पाता।

जैसे प्रवचन का समय हो गया हो और पंडितजी द्वार से आते हैं। वे द्वार पर खड़े मुमुक्षुओं से वार्ता करने लगते हैं। वे समझते हैं कि यदि हम उनसे बात नहीं करें तो वे हमें अभिमानी

(शेष पृष्ठ 7 पर)

टोडरमल महाविद्यालय प्रवेश
प्रार्थना-पत्र

टोडरमल महाविद्यालय में प्रवेश संबंधी आवश्यक नियम

(पृष्ठ–4 का शेष ..)

समझेंगे। वे स्वयं को लोग अभिमानी न समझें – इसकारण बाध्य होकर उन व्यक्तियों से वार्तालाप करते हैं। इसमें पंडितजी का प्रभावित होना ही मूलकारण है। यह उनकी ही कमजोरी है, उनकी ही तत्समय की योग्यता है।

ज्ञेय को जानने में भी आत्मा ज्ञेय से प्रभावित नहीं है; अतः ज्ञाता–ज्ञेय सम्बन्ध कोई सम्बन्ध नहीं है; यह तो स्वभाव है। ज्ञाता का स्वभाव जानना है और ज्ञेय का स्वभाव प्रमेय बनना है। इन दोनों का अपना–अपना स्वतंत्र स्वभाव है।

जिसप्रकार सूर्य का स्वभाव उदय होना है एवं कमल का स्वभाव सूर्य उदित होते ही खिलना है। सूर्य का स्वभाव उदय होना है; अतः उदित होता है। कमल का स्वभाव; सूर्य के उदित होते ही खिलना है; अतः वह उस समय खिलता है। दोनों अपने स्वभाव के कारण उगते एवं खिलते हैं। इसप्रकार दोनों में परस्पर निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है। इसी भाँति ज्ञाता–ज्ञेय सम्बन्ध निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध है; वह स्वयं में कोई सम्बन्ध नहीं है। निमित्त–नैमित्तिक संबंध तो नाममात्र का संबंध है। वास्तविक संबंध तो एकत्व, ममत्व, कर्तृत्व व भोक्तृत्व संबंधी हैं।

पुण्य–पापभाव आस्रवभाव हैं। पूर्व में आचार्यदेव ने कहा था कि न पुण्य को इष्ट मानो और न ही पाप को अनिष्ट।

तब यहाँ प्रश्न उठता है कि आखिर पुण्य–पाप को क्या मानें?

यहाँ इस अधिकार में आचार्यदेव कहते हैं कि पुण्य–पाप को आस्रव मानो। इन आस्रवभावों से इस जीव का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है – इसमें जीव का न एकत्व है, न ममत्व, न कर्तृत्त्व, न ही भोक्तृत्त्व सम्बन्ध है। आत्मा का स्वभाव स्व–परप्रकाशक होने से ज्ञाता–ज्ञेयरूप निमित्त–नैमित्तिक सम्बन्ध हो सकता है; लेकिन यह भी सहजभाव से इस जीव के जानने में आवे तो ही जानता है। जानने में नहीं आवे तो नहीं जानता है।

इसके सन्दर्भ में मोक्ष अधिकार में तो आचार्यदेव कहेंगे कि बंधन को जानने से इस जीव के बंधन नहीं कटेंगे, बंधन का विचार करने से भी बंधन नहीं कटेंगे।

इसप्रकार के कथन से आचार्यदेव ने जानने का निषेध नहीं किया है। यदि जानने का निषेध करेंगे तो स्व–परप्रकाशकस्वभावी आत्मा का ही निषेध हो जाएगा। जैसे, बंधन को जानने से बंध कटेगा नहीं, वैसे ही बंधन को जानने से बंध होगा भी नहीं। यहाँ यदि जानने से कर्म कटेंगे ऐसा मानेंगे तो जानना मुक्ति का कारण सिद्ध होगा; अतः यहाँ मुक्ति के कारणपने का निषेध है, जानने का निषेध नहीं है।

आस्रवभाव दो प्रकार के हैं – 1. द्रव्यास्रव, 2. भावास्रव। इसके पुण्यास्रव एवं पापास्रव इसप्रकार के भी दो भेद हैं। इनकी चर्चा पुण्यापापाधिकार में की गई है। आचार्यदेव इस अधिकार में द्रव्यास्रव एवं भावास्रव का विश्लेषण करते हैं।

आत्मा में मोह–राग–द्वेषभाव होते हैं और उनके निमित्त से ज्ञानावरणादि कर्म आते हैं। उन मोह–राग–द्वेष भावों को ही भावास्रव कहते हैं एवं उनके निमित्त से ज्ञानावरणादि कर्मों के आने को द्रव्यास्रव कहते हैं। ज्ञानी इन दोनों से सदैव भिन्न रहता है। इसी अर्थ का पोषक आचार्य अमृतचन्द्र का यह कलशकाव्य है –

भावास्रवाभावमयं प्रपन्नो, द्रव्यास्रवेभ्यः स्वत एवं भिन्नः।
ज्ञानी सदा ज्ञानमयैक भावो, निरास्रवो ज्ञायक एक एव।।115।।

भावास्रवों का अभाव हो गया और द्रव्यास्रवों से तो यह भगवान आत्मा स्वतः भिन्न ही है। इसप्रकार ज्ञानी जीव ज्ञानमय भाव भाते होने से सदा निरास्रव ही हैं।

आस्रव के जो 57 प्रकार के भेद–प्रभेद होते हैं; उनकी चर्चा यहाँ आस्रवाधिकार में नहीं है। सम्यग्दर्शन की भूमिका में ज्ञानियों के आस्रव नहीं होता – यह बताना ही आस्रवाधिकार का मूल उद्देश्य है।

हमारे पूर्व में बंधे हुए कर्म जब उदय में आते हैं तो मोह–राग–द्वेष के परिणाम होते हैं और जब मोह–राग–द्वेष के परिणाम होते हैं, तो नूतन कर्मों का आस्रव होता है, नवीन कर्मबंध होता है; और फिर जब ये बंधे हुए कर्म उदय में आते हैं तो मोह–राग–द्वेष भाव होते हैं। जब मोह–राग–द्वेष भाव होते हैं तो नवीन कर्मबंध होता है; यही चक्र अनादिकाल से चला आ रहा है, इस दुष्चक्र को तोड़ने का उपाय इस आस्रवाधिकार में बताया गया है।

द्रव्यकर्म के उदय से जो भाव होते हैं, उन भावों से ही आगामी कर्मबंध होता है – ऐसी हमारी मान्यता है।

यदि हम इसके विस्तार में जायें तो यह स्पष्ट होता है कि ज्ञानावरणादि आठों कर्मों के उदय से जो भी होता है, वह सब आगामी कर्मबंध का कारण नहीं है; अकेले मोहनीयकर्म के उदय में जो होता है, वही आगामी कर्मबंध का कारण है।

ज्ञानावरण कर्म के उदय में जो अज्ञान है उस अज्ञान से आगामी कर्मों का आस्रव नहीं होता है। दर्शनावरण कर्म के उदय से जो अदर्शन है, उस अदर्शनभाव के कारण आगामी कर्मों का आस्रव नहीं होता है। अंतराय कर्मों के उदय से जो हमें अंतराय प्राप्त होता है, वह आगामी कर्मबंध का कारण नहीं है। वेदनीय कर्म के उदय से जो साता, असाता संयोग मिलते हैं, वे कर्मों के आस्रव के कारण नहीं हैं। आयु, नाम और गोत्र कर्म के कारण भी जो संयोग मिलते हैं, उनके कारण भी आगामी कर्म का बंध नहीं होता है, मात्र मोहनीय कर्म के उदय से जो मोह–राग–द्वेष परिणाम होते हैं; उन परिणामों से ही आगामी कर्मबंध होता है। ¼Øe'k%½

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

कु. वीणा जैन (अजमेरा) को नेशनल अवार्ड

जैनसमाज को कलाजगत में गौरवान्वित कर रही 13 वर्षीय कु. वीणा अजमेरा ने 2001 में राष्ट्रीय बाल पुरस्कार (नेशनल चाइल्ड अवार्ड) प्राप्त कर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त लिमका बुक में अपना रिकार्ड दर्ज कराकर, संगीत नाटक अकादमी से पुरस्कृत होकर व यूनेस्को एसोसिएशन अवेयरनेश अवार्ड प्राप्त कर यह साबित कर दिया है कि जैनसमाज में प्रतिभाओं की कमी नहीं है।

महामहिम उपराष्ट्रपति श्री कृष्णकान्त दिल्ली स्थित विज्ञानभवन में
कु. वीणा अजमेरा को नेशनल अवार्ड प्रदान करते हुये

अपने प्रसिद्ध मंगलकलश नृत्य से अहिंसा, पर्यावरण सुरक्षा, शाकाहार, व्यसनमुक्ति व विश्वबंधुत्व के संदेशवाहक 36 झूलते हुये कलश सिर पर रखकर नृत्य में अखिल भारतीय रिकार्ड बनानेवाली भीलवाड़ा की इस बालिका ने देश-विदेश में 60 से अधिक प्रदर्शन देकर एक कीर्तिमान स्थापित किया है एवं अब वह विश्वरिकार्ड स्थापित करने हेतु गहन अभ्यासरत है।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट एवं श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय परिवार जयपुर की ओर से कु. वीणा जैन को इस गौरवपूर्ण उपलब्धि के लिये हार्दिक बधाई एवं भविष्य के लिये मंगलमय शुभकामनायें!

आवश्यक सूचना

जैनपथप्रदर्शक के सभी सदस्यों को सूचित किया जा रहा है कि जैनपथपदर्शक के सभी एड्रेसों को अभी-अभी पुन: कम्प्यूटर में कम्पोज किया गया है; अत: उनसे अनुरोध है कि वे अपने-अपने एड्रेस एक बार अवश्य चैक कर लें एवं यदि उसमें किसीप्रकार का संशोधन आवश्यक समझें तो उस संशोधित एड्रेस को जैनपथ से निकालकर, पोस्टकार्ड पर चिपकाकर हमें भेज देवें।

एड्रेस की पूर्णता न होने से या कुछ अशुद्धि होने से अंक हमारे पास लौटकर आ जाता है, जिससे पाठकों को जैनपथप्रदर्शक की अनियमितता संबंधी शिकायत रहती है। यदि आपके एड्रेस पर पिन कोड नहीं लिखा है तो वह भी लिखकर भेजें। जिससे आपको जैनपथप्रदर्शक नियमित उपलब्ध हो सके । जिन महानुभावों को जैनपथप्रदर्शक के दो-दो अंक मिल रहे हों, वे भी कृपया शीघ्रातिशीघ्र सूचित करें। सहयोग के लिये धन्यवाद !

ह्व प्रबन्ध सम्पादक

अप्रैल माह में आनेवाली 24 तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों की तिथियाँ

1 अप्रैल	– भगवान पार्श्वनाथ का ज्ञानकल्याणक
2 अप्रैल	– भगवान चन्द्रप्रभ का गर्भकल्याणक
5 अप्रैल	– भगवान शीतलनाथ का गर्भकल्याणक
6 अप्रैल	– भगवान आदिनाथ का जन्म एवं तप कल्याणक
12 अप्रैल	– भगवान अनंतनाथ का ज्ञान एवं मोक्ष कल्याणक तथा भगवान अरनाथ का मोक्षकल्याणक
13 अप्रैल	– भगवान मल्लिनाथ का गर्भकल्याणक
15 अप्रैल	– भगवान नेमिनाथ एवं कुन्थुनाथ का ज्ञान कल्याणक
17 अप्रैल	– भगवान अजितनाथ का मोक्षकल्याणक एवं चैत्रमाह के दसलक्षण पर्व का प्रारंभ
18 अप्रैल	– भगवान संभवनाथ का मोक्षकल्याणक
22 अप्रैल	– भगवान सुमतिनाथ का मोक्षकल्याणक
23 अप्रैल	– भगवान सुमतिनाथ का जन्मकल्याणक
25 अप्रैल	– भगवान महावीर का जन्मकल्याणक
26 अप्रैल	– चैत्रमाह के दसलक्षण पर्व का समापन दिवस
28 अप्रैल	– भगवान पार्श्वनाथ का गर्भकल्याणक

महत्त्वपूर्ण सूचना

ग्रीष्मावकाश में बालकों में जैनधर्म के प्रारंभिक ज्ञान, सदाचार एवं नैतिक शिक्षा के अध्यापन हेतु पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर के पास अनेक स्थानों से विद्वानों की मांग आ रही है।

अत: जो भी समाज ग्रीष्मावकाश में अपने यहाँ विद्वान बुलाकर धार्मिक गतिविधियाँ संचालित करना चाहती हैं, वे शीघ्र हमें पत्र लिखें। समय पर पत्र आने पर ही उनके लिये योग्य विद्वानों की व्यवस्था की जा सकेगी।

– प्रबन्धक, पीयूष शास्त्री, पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) **अप्रैल (प्रथम) 2002**
आई. आर. / R. J. 3002/02

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित अनुभवप्रकाश** जैनदर्शनाचार्य, एम.ए., बी.एड. एवं **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, एम.ए.
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 515581, 515458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर